विद्यार्थियों में मूल्यों का बीजारोपण - दो अवलोकन

केवलानंद काण्डपाल

किसी ऐसे समाज में जो लोकतांत्रिक प्रणाली से शासित है, शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहार को इस प्रकार से पोषित एवं संवर्धित करना है कि उनमें लोकतंत्र हेतु उपयुक्त मूल्यों का बीजारोपण हो सके। इसके लिए ज़रूरी ज्ञान, कौशल एवं मूल्यों से सम्बन्धित व्यावहारिक अनुभव विद्यालय में विद्यार्थियों को मिलने चाहिए। ज्ञान एवं कौशल वे क्षमताएँ हैं जिनके बारे में बहुत हद तक कहा जा सकता है कि इनको सिखाया जा सकता है, परन्तु मूल्यों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि इनको किसी विषय की भाँति परोसते हुए कक्षा-कक्ष में पढ़ाया-लिखाया जा सकता है। वस्तुतः मूल्य अनुकरणीय होते हैं और इनको छात्रों तक पहुँचाने का एक ही रास्ता नज़र आता है कि इन्हें विद्यार्थियों के सामने उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जाए। विद्यार्थी लगातार इस व्यवहार के अवलोकन के बाद इसको अपनाने के लिए उद्धत हों। प्रस्तुत आलेख में विद्यालय के ऐसे ही दो अवलोकनों से प्राप्त अन्तर्दृष्टि को साझा करने का मन्तव्य है।

प्रथम अवलोकन

डाइट से पदोन्नति के फलस्वरूप प्रधानाध्यापक के रूप में विगत वर्ष अक्टूबर में राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय पुड्कुनी में कार्यभार ग्रहण किया। जनपद बागेश्वर के अति दुर्गम क्षेत्र में यह विद्यालय स्थित है। संचार की सुविधा नहीं है और समाचार की जानकारी का एकमात्र साधन समाचार पत्र हैं। समाचार पत्र पढ़ने का सामाजिक अभ्यास न के बराबर है। बताने का मकसद यह है कि सहज ही विश्वास किया जा सकता है कि बच्चे समाज द्वारा निर्धारित मूल्य प्रणाली को अपना रहे होंगे और उस पर प्रश्न करने के लिए ज़रूरी एक्सपोज़र का अभाव है। विद्यालय में कार्यभार ग्रहण करने के पहले दिन ही इसका कुछ-कुछ अन्दाज़ा मुझे हो गया था। दरअसल, हुआ यह कि मेरे विद्यालय पहुँचने के दिन बहुत सारे विद्यार्थी सड़क पर इन्तज़ार करते मिले। मैंने

मन ही मन सोचा कि नवीन प्रधानाध्यापक को देखने की उत्सुकता हो या फिर स्वागत में ये विद्यार्थी वहाँ पर मौजूद हैं। यहाँ तक तो बात ठीक ही लगी मुझे। मेरा चौकना लाज़मी था जब कुछ बच्चों ने मेरा बैग लेने का आग्रह किया। मेरा बैग बहुत भारी नहीं था, लैपटॉप हमेशा साथ रखने की आदत है और मेरे लिए सहज एवं सामान्य बात है कि अपना बैग में स्वयं ही ले जाऊँ। विद्यालय के बच्चों से यह मेरी पहली मुलाकात थी, सो इस बारे मे मैंने बात आगे न बढ़ाकर स्नेहपूर्वक अपना बैग स्वयं ले जाने की बात कही। बच्चों से बातचीत करते हुए विद्यालय पहुँच गया।

बच्चों की आपसी खुसर-पुसर से यह अनुमान लगाने में कठिनाई नहीं हुई कि बच्चे मेरा बैग न ले जा पाने के कारण खुश नहीं थे और अपराधबोध महसूस कर रहे थे। मेरे लिए चिन्ता का विषय तो यह था ही कि बच्चों में सम्मान जताने का किस प्रकार का मूल्य पोषित हो रहा है, लेकिन पहले ही दिन इस बारे में बच्चों से बातचीत करना मुझे जल्दबाज़ी लग रहा था। फिलवक्त मैंने मन में निश्चय कर लिया था कि इस मुद्दे पर बहुत जल्दी ही बात करनी ज़रूरी है। इससे पहले पूरे परिप्रेक्ष्य को जानना भी ज़रूरी था। यह उपक्रम अगले दो-तीन दिन तक चलता रहा। मैं विद्यालय के निकट पहुँचता, बच्चे मेरा बैग ले जाने का आग्रह करते और मैं स्नेहपूर्वक मना कर देता। इसी बीच मैंने नोटिस किया कि विद्यालय की एक अध्यापिका (नामोल्लेख करना उचित नहीं है) के बैग को बच्चे ले जा रहे हैं। मेरे लिए ज़रूरी हो गया कि विद्यालय के शिक्षकों से इस मामले में बात की जाए और बच्चों से भी जानने का प्रयास किया जाए कि वे इस तरह का व्यवहार क्यों प्रदर्शित कर रहे हैं। सो पहले बच्चों से ही बात करने का निश्चय किया।

प्रार्थना के मौके का लाभ उठाते हुए अपना काम स्वयं करने और जब तक बहुत ज़रूरी न हो, दूसरों की मदद न लेने की पृष्ठभूमि पर अपनी

बात रखी। बच्चों से जानना चाहा कि क्यों वे मेरा और शिक्षकों का बैग ले जाने का आग्रह करते हैं। बच्चों ने बताया कि उन्हें अच्छा लगता है। इस अच्छे को स्पष्ट करने को कहा तो उन्होंने बताया कि ऐसा करके वे गुरूजनों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हैं। मैंने कहा कि यह तो किसी व्यक्ति का काम करना है जबकि वह व्यक्ति अपने घर से तो बैग लेकर आ ही रहा है और विद्यालय के निकट से भी ले जाने में समर्थ है तो इसका कोई तार्किक आधार नहीं है। सम्मान व्यक्त करने के लिए किसी का कोई काम कर देना ज़रूरी नहीं, इसके अन्य कई तरीके हो सकते हैं। बच्चों ने कहा कि वे हमेशा से ही ऐसा करते हैं। यह एक तरह से सत्ता के प्रति स्वामिभक्ति प्रदर्शित करने का शुरुआती व्यवहार है। अतः बच्चों को मैंने बताया कि सम्मान प्रदर्शित करने के लिए यह ज़रूरी नहीं है कि हम किसी का बैग उठा लें, उसका कोई ऐसा काम कर दें जिसे वह स्वयं करने में समर्थ है बल्कि सम्मान का प्रदर्शन करने के लिए ज़रूरी है कि विद्यालय एवं कक्षा-कक्ष प्रक्रियाओं में शिक्षकों के निर्देशों के पालन और आपसी बातचीत और विचार-विमर्श में यह प्रदर्शित करें। किसी की मदद करना अच्छी बात है, बशर्ते कि उस व्यक्ति को इसकी ज़रूरत हो और वह इसका आग्रह करे। किसी सत्ता के भय से चाटुकारिता और किसी ज़रूरतमन्द की मदद करने में मूलभूत अन्तर है। सो बच्चों के साथ मिलकर यह नियम बनाया गया कि आइन्दा बैग ले जाने का कोई आग्रह नहीं करेगा, यदि कभी ज़रूरत महसूस होगी तो हम स्वयं ही

आपसे मदद लेंगे। अब शिक्षकों से बातचीत करने की ज़रूरत थी। शिक्षकों की बैठक तो लेनी ही थी, उसी में किसी शिक्षक को इंगित किए बगैर एक नियम तय किया कि हम अपना बैग एवं सामान स्वयं उठाएँगे जब तक कि वह इतना भारी न हो कि हम अकेले ऐसा कर सकने में सक्षम न हों और शिक्षक केवल शिक्षक से ही मदद लें तो अच्छा रहेगा। इस बात पर सहमति बन गई।

अगले कुछ दिनों तक बच्चों का आग्रह तो रहा परन्तु शिक्षकों द्वारा इस आग्रह को मना कर देने पर बच्चों की बैग ले जाने का इसरार करने की आदत छूट गई। अभी भी शाला पहुँचने के समय विद्यालय के निकट बच्चे मौजूद रहते हैं। 'गुड मॉर्निंग' सम्बोधन का आदान-प्रदान होता है, कभी बच्चे पहल करते हैं और कभी हम। विद्यालय पहुँचते-पहुँचते बच्चों से बातचीत भी हो जाती है। इससे आपसी विश्वास मज़बूत हुआ है और अपना काम स्वयं करने के मूल्य का समुचित प्रदर्शन भी हो पाया। विश्वास किया जा सकता है कि यह अनुभव बच्चों में इस मूल्य के बीजारोपण में सहायक होगा और आगामी जीवन में इसके महत्वपूर्ण निहितार्थ होंगे।

द्वितीय अवलोकन

विद्यालय में स्वच्छता का कार्य करने के लिए कोई कार्मिक नियुक्त नहीं है। सो विद्यालय में कक्षा-कक्षों सहित टीचर्स रूम, कार्यालय कक्ष एवं प्रधानाध्यापक कक्ष की साफ-सफाई और झाड़ू लगाने का काम विद्यार्थी (विशेषकर बालिकाएँ) करती हुई नज़र आईं। प्रधानाध्यापक कक्ष तो बहुत ही अस्त-व्यस्त था (विगत कुछ समय से विद्यालय में नियमित प्रधानाध्यापक पदस्थ नहीं थे, सो यह असामान्य बात भी नहीं थी)। विद्यालय में तीन शौचालय हैं, इनकी भी साफ-सफाई बच्चे ही कर रहे थे। इनमें से एक शौचालय शिक्षकों एवं कार्यालय स्टाफ द्वारा उपयोग में लाया जा रहा था।

यह प्रक्रिया तो बच्चों में एक असंगत मूल्य का बीजारोपण कर रही थी। इसमें तुरन्त ही हस्तक्षेप की ज़रूरत थी। इस मामले को हल करने के लिए लोकतांत्रिक आधार पर निर्णय लेने की आवश्यकता थी। अतः पहले शिक्षकों एवं कार्यालय स्टाफ की बैठक में यह तय किया गया कि हम अपने-अपने कक्ष स्वयं साफ एवं सुव्यवस्थित करेंगे और अपने शौचालय की सफाई बारी-बारी से स्वयं करेंगे। शौचालय साफ करने की पहली बारी मैंने स्वयं की ही लगाई। अगले दिन मैंने शौचालय की सफाई कर अपना दायित्व निर्वहण किया। विद्यार्थियों को और सम्भवतः कुछ शिक्षकों को यह अटपटा लगा। इस बीच कुछ विद्यार्थियों (विशेषकर बालिकाओं द्वारा) आग्रह किया गया कि वे इस काम को कर देंगी। मैंने साफ-साफ मना कर दिया और बताया कि घर पर तो मैं इस काम को लगभग रोज़ ही करता हूँ, अपना काम करने

में क्या झिझक। अब हम सभी कार्मिक अपने-अपने कक्षों की साफ-सफाई और सुव्यवस्थित करना स्वयं करते हैं और हाँ, शौचालय की सफाई भी। अब शिक्षकों की झिझक भी दूर हो गई है। बच्चों को भी इसमें कुछ अटपटा नहीं लगता। इस बीच प्रधानाध्यापक कक्ष को सुव्यवस्थित करने के क्रम में बच्चों की छोटी-मोटी मदद ली परन्तु अधिकांश हिस्सा स्वयं निपटाया। अपना काम स्वयं करना और कोई भी काम अच्छा या बुरा नहीं होता, बस काम ही होता है – इस मूल्य का प्रदर्शन बहुत ही सशक्त तरीके से हो रहा है। यह मूल्य देर-सबेर बच्चों में भी पल्लवित होगा, यह विश्वास किया जा सकता है। इस दौरान बच्चों का शिक्षकों के प्रति (मेरे प्रति भी) एक विशेष तरह का सम्मानपूर्ण रिश्ता मज़बूत हुआ है और आपसी विश्वास में निखार ही आया है। अब बच्चे सम्मान प्रदर्शित करने के वास्तविक व्यवहारों को समझने लगे हैं, यह विद्यालय के लिए सन्तोष की बात है।

केवलानन्द काण्डपाल: ज़िला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, बागेश्वर, उत्तराखण्ड में कार्यरत।
सभी चित्र: हीरा धुर्वे: भोपाल की गंगा नगर बस्ती में रहते हैं। चित्रकला में गहरी रुचि। साथ ही 'अदर थिएटर' रंगमंच समूह से जुड़े हुए हैं।